संस्कृति
डा. ज्योति किरण चंद्राकर

आंचलिक वैवाहिक नेंग में डूमर बिहाना

छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचल में विवाह संस्कार में डूमर बिहाना रस्म बहुत मनोरंजक, रोचक तथा वर का परीक्षण करने वाला रसम किया जाता था ,जो की सुहासिनों द्वारा संपन्न किया जाता था। छत्तीसगढ़ के ग्रामीण अंचल में डूमर बिहाना रस्म वर के परीक्षण के लिए जेवनास (बाराती रुकने की जगह जलपान के लिए) में किया जाता था। वर पक्ष जब बारात लेकर वधू के घर जाते हैं तो वहां रुकने के लिए जेवनास के रूप में शाला प्रांगण दिया या किसी सगा संबंधी के घर दिया जाता था। जेवनास में सुहासिनों द्वारा रंगोली बनाई जाती थी। जिसमें से एक रंगोली चावल आटे की विशेष आकृति से बनाई जाती थी। रंगोली में हल्दी - सुपारी को एकांतर क्रम में जमा कर रखा जाता था। जब बारात वहां आती तो दूल्हे को उस रंगोली से पैर बिना स्पर्श किए रंगोली को बिन मिटाए पार करना रहता था। जिसमें रंगोली की कोई लाइन खराब ना हो, और न ही हल्दी सुपारी अपनी जगह से हटे और रंगोली नहीं मिटाना चाहिए। फिर वर द्वारा इस प्रकार रंगोली को पार किया जाता था, क्योंकि यह कार्य वर के प्रतिष्ठा और दक्षता से जुड़ी हुई होती थी। इसलिए वह रंगोली को बिना मिटाए कुशलतापूर्वक पैर रखते हुए आगे बढ़ता है। जब सफलतापूर्वक रंगोली पार कर लेते हैं, तब सुहासिनें खुश हो जाती है, और उन्हें यह समझ आ जाता है कि वर बहुत कुशल और दक्ष है इस कारण उसका पैर सही है। वह हर कार्य अच्छे से कर सकता है। इस प्रकार यह रस्म बहुत रोचक, रोमांचक व परीक्षण करने वाला डूमर बिहाना कहलाता है।

कला जगत
डा. अर्चना पाठक

छत्तीसगढ़ में रामायणकालीन संगीत का प्रभाव

रामायण काल में संगीत रूपी दो धाराओं साम या मार्ग संगीत और लौकिक या देशी संगीत की शिक्षा नियमानुसार दी जाती थी। रामायण काल में वर्तमान छत्तीसगढ़ का अधिकांश भाग श्रीराम कथा के पात्रों से संबंधित पाया जाता है। अतः वर्तमान छत्तीसगढ़ को रामायणकालीन आर्य सभ्यता का प्रसार करने में पूर्ण स्थान और गौरव प्राप्त है। वर्तमान छत्तीसगढ़ तत्कालीन संस्कृति और सभ्यता का एक पुनीत केन्द्र था। रामायण काल तक आर्य संस्कृति छत्तीसगढ़ के बस्तर स्थित दंडकारण्य तक पहुंच चुकी थी। आर्यों ने विंध्याचल और सिहावा पर्वत के निचले भाग तक पहुंच कर छत्तीसगढ़ के इस भू भाग में बसना प्रारंभ कर दिया था। उत्तर भारत में आर्य सभ्यता के प्रहरी और उनकी संस्कृति के रक्षक प्रमुख रूप से विश्वामित्र थे, किन्तु दक्षिण दिशा की ओर छत्तीसगढ़ समेत शेष भाग में संस्कृति को प्रशस्त करके प्रसारित करने का श्रेय अगस्त्य मुनि को जाता है। इस युग की सबसे बड़ी उपलब्धि वाल्मीकि रामायण है, जिसमें छत्तीसगढ़ भू भाग के बौद्धिक विकास की जानकारी मिलती है। इसके अतिरिक्त बाल्मीकि रामायण की कथा के अंतर्गत कुछ ऐसे पात्र हैं जो वर्तमान छत्तीसगढ़ के भू भाग में रहते हैं। रामायण काल पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है इस युग के सभी वर्ग एवं जाति, राजा, स्त्री, पुरुष, वानर, राक्षस सभी में संगीत का पर्याप्त प्रचार प्रसार था। अयोध्या नगरी, लंका, किष्किंधा आदि नगरों में एवं आर्यों, राक्षसों, वानरों के नगरों में संगीत के स्वर गूंजते रहते थे।

ऐतिहासिक
डा. रामकुमार बेहार

छत्तीसगढ़ में शैव धर्म

छत्तीसगढ़ राज्य में वैदिक काल से आज तक भगवान शिव की पूजा की जाती है। शरभपूरीय शासक परम वैष्णव थे मगर बाद में स्थिति में परिवर्तन आया। दक्षिण कोसल में राज करने वाले पांडुवंशी शासक तीतरदेव की शाही उपाधि ही महाशिव थी। इसी वंश के महाशिवगुप्त बालार्जुन शैवा मतावलंबी के रूप में विख्यात हैं। इसकी राजमुद्रा में वृषभ और त्रिशूल का अंकन है। यह दोनों शिव से शिव नंदी रखकर, शिव के वाहन नंदी के प्रति श्रद्धासुमन अर्पित किया है। नलवंशी महान शक्तिशाली भवदत्त वर्मा के ईष्ट देव भगवान शंकर थे। उनका पुत्र अर्थपति महेश्वर की उपाधि प्राप्त करता था जो शंकर का ही एक नाम है। स्कंदवर्मा ने शैव संप्रदाय के स्थान पर वैष्णव धर्म को अपनाया। बस्तर के नागवंशी शासकों के काल में जगदेव भूषण राजा के सामंत जिसका नाम चंद्रादित्य था, बारसूर में शिव मन्दिर बनाया जो आज भी तत्कालीन स्थापत्य कला का शानदार नमूना है। नागवंशी काल में ही बारसूर में एक वृहदाकार चट्टान को तराश कर बड़ा गणेश बनाया गया, जो सर्वविदित है। कल्चुरी काल में शैव धर्म को राजश्रय मिला। इस वंश के अधिकांश शासक शैव थे। अभिलेखों में शिव की वंदना की गई है। कल्चुरीकालीन महत्वपूर्ण स्थलों यथा तुम्मान, मल्हार, रतनपुर,पाली, जांजगीर आदि स्थानों से शिव मूर्ति और मंदिर मिले हैं। मल्हार से प्राप्त एक मूर्ति में भगवान शिव अपने वाहन नंदी पर माता पार्वती के साथ आरूढ़ हैं। रतनपुर का शिव मंदिर चारों दिशाओं में ख्याति प्राप्त करने में सफल रहा।

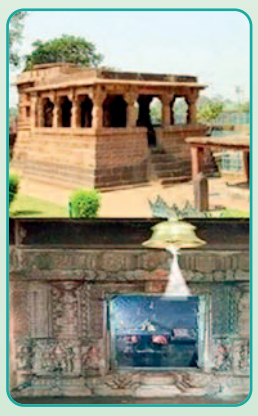

जिला मुख्यालय से लगभग 35 किलोमीटर दूर, वनों की गहराई में बसा यह गांव अपने भीतर एक ऐसी दुनिया समेटे है जो अब भी प्रकृति की गोद में पूरी सादगी से सांस ले रही है। यहां की ताजी हवा, पक्षियों की चहचहाहट और चारों ओर फैला हरियाली का विस्तार आपके दिल-दिमाग को एक अनकही शांति से भर देता है। गोंड आदिवासी समाज की जीवनशैली यहां की आत्मा है-इनका सरल, शांत और प्रकृति से जुड़ा जीवन देखने वालों को ठहरने पर मजबूर कर देता है। यहां आकर यह एहसास होता है कि छत्तीसगढ़ सिर्फ खनिजों या त्यौहारों का नहीं, बल्कि अप्रतिम प्राकृतिक संस्मरणों का भी राज्य है।

धनदेवी माता के दरबार में पूरी होती है भक्तों की मन्नत

देवपाण्डुम गांव के पास स्थित एक प्राकृतिक उपहार है, जो सैकड़ों वर्षों से निरंतर बह रहा है। यह झरना किसी चित्रकार की बनाई कृति जैसा लगता है, जहां चट्टानों से गिरता पानी अपनी मधुर ध्वनि से मन को मोह लेता है। बरसात के मौसम में यह झरना अपने पूरे सौंदर्य के साथ खिल उठता है, और सैकड़ों पर्यटक तथा गांव वाले यहां आकर इसका आनंद लेते हैं। झरने के आसपास की हरियाली और ताजगी, इसे एक दंतकथा जैसा स्थान बना देती है। पास ही एक गुफानुमा स्थान भी है, जिसके बारे में मान्यता है कि सदियों पहले यहां किसी का वास हुआ करता था। आज ये गुफाएं रहस्यों से भरपूर हैं, जो इतिहास प्रेमियों और साहसिक यात्रियों को रोमांचित करती हैं।

झरने से कुछ दूरी पर, जंगलों के मध्य एक पगडंडी आपको ले जाती है एक दिव्य स्थल—धनदेवी माताजी के मंदिर तक। यह स्थान न तो किसी बड़ी ईमारत में बसा है, न ही इसकी कोई भव्य सजावट है, लेकिन यहां की ऊर्जा और आस्था की ताकत आपको झुकने पर विवश कर देती है। गांव के सरपंच श्री गौतम राणा बताते हैं कि गांव की समृद्धि और शांति के लिए सभी ग्रामीण यहां देवी मां की आराधना करते हैं। कहा जाता है कि जो भी यहां सच्चे दिल से प्रार्थना करता है, उसकी मुराद अवश्य पूरी होती है। जंगलों की गोद में बसी यह आस्था, आधुनिकता से दूर लेकिन आत्मा के बेहद पास है।

देवपाण्डुम गांव एक ऐसी जगह है जो छत्तीसगढ़ की सांस्कृतिक, आध्यात्मिक और प्राकृतिक धरोहर से गहराई से जुड़ा हुआ है। यह स्थान न केवल प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण है, बल्कि लोककथाओं, परंपराओं और श्रद्धा की भावनाओं से भी समृद्ध है। देवपाण्डुम का शाब्दिक अर्थ है - स्देवताओं का निवासस और यहां के निवासियों का विश्वास है कि यह स्थल दिव्य शक्तियों से आशीर्वादित है।

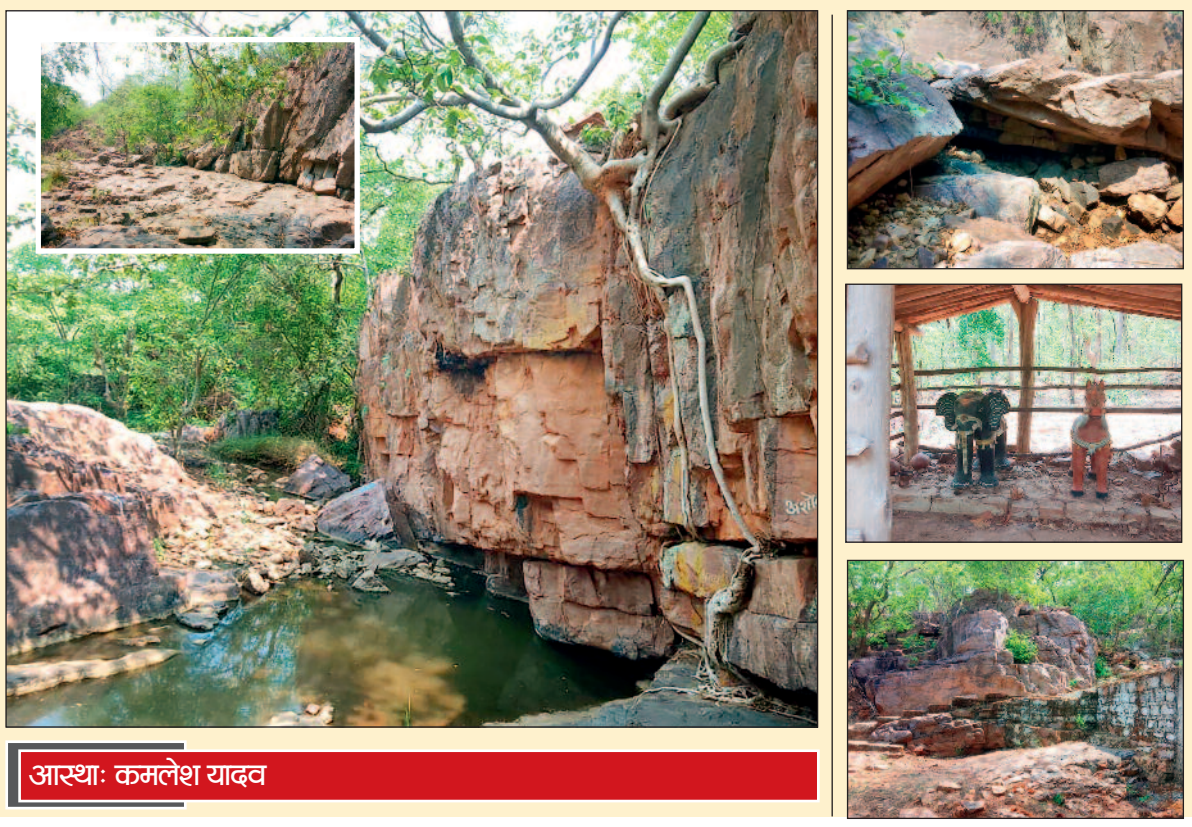

आस्थाः कमलेश यादव

गांव की कहानी : लक्ष्मी शंकर निगम

सांकरा में कई पुरातन साक्ष्य

छत्तीसगढ़ के सरायपाली क्षेत्र में जोंक नदी के किनारे ग्राम सांकरा बसा हुआ है। जोंक नदी ग्राम सांकरा और कौड़िया राज्य की विभाजक नदी है। सांकरा का एक और संकट भी होता है। जोंक नदी के बाढ़ के कारण प्रायः इस ग्राम को संकट का सामना करना पड़ता है इस कारण हो सकता है इस गांव का नाम संकट की वजह से रखा गया होगा। इतिहासकार विल्सन के अनुसार वे जोंक के अभिज्ञान को अधिक उचित मानते हैं, क्योंकि महानदी के मैदान से समुद्री तट को जोड़ने वाला काल्पनिक पथ सांकरा के पास से जाता था, जो इस नदी के तट पर स्थित है। पलाश वृक्षों की अधिकता के कारण इसका नाम प्लाशिनी पड़ना समुचित प्रतीत होता है। जोंक नदी को पुराणों में भी प्लाशिनी कहा गया है ।

सांकरा का क्षेत्र पहले घनघोर जंगल था। अंग्रेज इन वनों से लाभ लेना तथा अपने साम्राज्य की नींव गहरी करना चाहते थे। इस कारण अधीनस्थ रियासत पर यातायात में सुधार लाने के लिए दबाव डालते रहते थे। अंग्रेजों ने कुटिलता पूर्वक अधिक लाभ लेने के लिए वनों का नियोजित दोहन किया। सन 1866 में बनाए गए उप जमींदारियों में सांकरा को उप जमींदारी का दर्जा प्राप्त था, जिसके अधिकार में 17 गांव आते थे। उस समय इस जमींदारी के प्रमुख जगन्नाथ दीवान थे। जगन्नाथ दीवान को 5 वर्षों के लिए भूमिहारी कर दिया गया था, जिसमें वह शर्त रखा गया था कि 5 वर्षों में यहां के जंगल को पूरी तरह साफ करना होगा। सांकरा में पूर्व से ही बाजार लगता था, जो सरायपाली बाजार के समकालीन था। शिक्षा के क्षेत्र में यहां पूर्व में उड़िया शिक्षण की व्यवस्था थी। सन 1905 के पश्चात से सी पी एंड बरार राज्य में विलय के साथ ही यहां उड़िया शिक्षण के स्थान पर हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था प्रारंभ हुई। यहां पूर्व में गोंड दीवान का स्वामित्व था।

भित्ति चित्र
सतीश उपाध्याय

अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान रजवार भित्ति चित्र की

छत्तीसगढ़ के मनेंद्रगढ़, चिरमिरी और भरतपुर के ग्रामों में रजवार भित्ति चित्र देखने को मिलते हैं। गर्मी के बाद बरसात और दिवाली के समय यह क्रम ऐसा चलता है जिसमें भित्ति चित्र बनाए जाते हैं। इस कलाकृति में दक्ष सोना बाई रजवार ने विश्व स्तर पर अपनी पहचान बनाई। यहां यह चित्र कला रजवार भित्ति चित्र के नाम से जानी जाती है। देश विदेश में इस भित्ति चित्र की प्रदर्शनी भी लगाई जाती है। जिसमें करमा माता की पूजा, करमा नृत्य, राहगीर, बैलगाड़ी, मछली पकड़ने का दृश्य , गोधूलि बेला और श्रृंगार की हुई ग्रामीण युवतियों के चित्रों को मूल विषय बनाया जाता है। इस भित्ति चित्र पर लघु फिल्मों का प्रदर्शन भी किया जा चुका है। रजवार भित्ति चित्रों की परंपरा को उदयपुर के सृजन कर्मी आत्मा दास मानिकपुरी ने आगे बढ़ाया। इस संस्कृति में रुचि रखने वाले विद्वानों ने इस कला के केनवास को अलग दृष्टि से देखा है , पर समूचे आदिवासी कला संस्कृति को जीवंतता का आधार, सुख सौभाग्य और लोक मंगल कामना ही है।

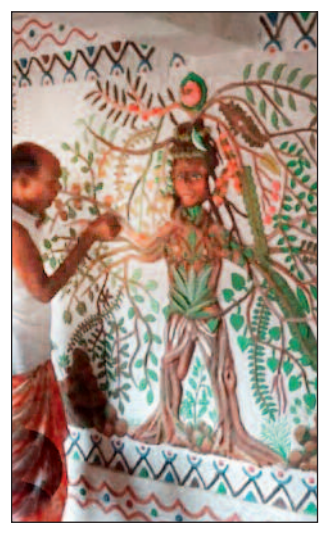

लेखकों से..

छत्तीसगढ़ की लोक कला, लोक साहित्य, पर्यटन, तीज त्योहार, गांव की कहानी, ऐतिहासिक, पुरातात्विक, शैलचित्र, भित्तिचित्र, कला कृति और पुरखा के सुरता के साथ ही सम सामयिक विषयों पर अधिकतम 500 शब्दों पर लेख भेजें- **Choupalharibhoomi@gmail.com**

छत्तीसगढ़ी काव्य में प्रगतिवाद

लोक साहित्य
डा. मंजू शर्मा

हिन्दी साहित्य में 1935 से कविता के विषय में परिवर्तन होने लगा, जिसका प्रभाव देश के विभिन्न बोलियों पर भी पड़ा। छत्तीसगढ़ी भाषा में किसानों की दुर्दशा, मजदूरों के शोषण, अर्थ विभाजन के साथ कविता में प्रगतिशीलता के अंकुर फूटे। कविता जन सामान्य की परिस्थितियों को उजागर करने लगी।

छत्तीसगढ़ी में प्रगतिवाद मार्क्स प्रभावित न होकर शोषण और आर्थिक विषमता के उत्पन्न आक्रोश है। रंजनलाल पाठक की कविता में शोषित वर्ग की वेदना व्यक्त हुई है। अन्न उपजाने वाला कृषक दाने दाने को मोहताज है। अर्थ की विषमता ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी है कि नित्य एक एकादशी व्रत है, किन्तु दिवाली का उत्साह कभी नहीं है। अपने आंसू रूपी तेल में फटे चिथड़े की वर्तिका लगा कर वह जीवन दीपक जलाता है, परिस्थितियों की विषमता ने उस पर इतने आघात किए हैं कि उसके जीवन में मात्र आंसू ही शेष हैं -

मोर दिवारी के दीया
तय टिम टिम टिम बर जा
कानी बुची एक ठन दीया
दया पहर के पाथेव
पटकु ल मय चीर के
बाती ओखर बनातेव।

कपिलनाथ कश्यप ने अपनी कविता में ग्वालों द्वारा दूसरों को दूध दही देकर स्वतः छाछ पान करने की असमानता को दूर किया है, इसलिए श्रीकृष्ण कथा महाकाव्य में दूध के ब्रज से मथुरा जाने पर रोक लगा दी गई है-

मथुरा नगरी जान देवय
अब गोकुल के दूध दही।
बिन पेट भर खाए तुमन
जाना पावा बात सही।
अब के बेचा मथुरा जाके
चोरी चोरी दूध दही।
मर मर के जो गाय चरावय
पावय पीए छाछ मही।

हिन्दी की प्रवृत्तियों का प्रभाव छत्तीसगढ़ी में मिलना सहज है, परंतु चल चित्र के विषाक्त वातावरण में छत्तीसगढ़ी गीत प्रभावित हो रहे हैं। आकाशवाणी में शिष्ट नाटकों में यहां तक कि लोक साहित्य में भी चलचित्र का प्रभाव पड़ा।

हरि ठाकुर, लक्ष्मण मस्तूरिया, राजेंद्र प्रसाद तिवारी, भगत सिंह सोनी और अखेचंद क्लांत जैसे अनेक साहित्यकारों ने अपनी प्रयोगवादी रचना का सृजन किया है।